Chapter-3

तृतीय परिच्छेद

प्रतीक नाट्य शिल्प तथा रंगमंचीय प्रतीक विधान :-

1. बदलती सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों के साथ बदलते नाट्यशिल्प
2. आमुख
3. रंगमंच
4. रंगीय उपकरण
5. रंग संकेत
6. रंग दीपन
7. अभिनय; वर्जित दृश्यों का अभिनय, अभिनय के नये प्रतिमान
8. नाट्य रूढ़ियों की प्रतीक पद्धति 9. प्रतीक नाटक और उसके विभिन्न तत्व
10. नाटकीय तत्वों में व्याप्त प्रतीक योजना की परिणति

    क. कथानक ख. मंगलाचरण

    ग. भरत वाक्यम घ. अवस्थायें

    ङ. पात्र परिकल्पना

11. भाषा शैली, संवाद योजना, देशकाल तथा वातावरण के रूप में वर्तमान राजनीति और नाट्य कृतियों में समाहित समाज शास्त्रीय पक्ष

तृतीय परिच्छेद

प्रतीक नाट्य शिल्प तथा रंगमंचीय प्रतीक विधान :-

सन् 1936 सेलेकर सन् 1982 तक के जन आन्दोलन तथा द्वितीय महायुद्ध का पर्याप्त प्रभाव भारतीय नाट्य साहित्य पर पड़ा । द्वितीय महायुद्ध के पश्चात भारत की सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों मेंआमूल-चूल परिवर्तन होने लगा । जिसका साहित्य के क्षेत्र में भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात साहित्य के क्षेत्र में भी पर्याप्त बदलाव आया । जिसमें नईकविता, नईकहानी, तथा प्रतीक नाटक जैसी विधाओं का जन्म हुआ । इन नवीन विधाओं में मात्रशिल्प तथा तकनीक ही नवीन नहीं थे, अपितु जीवन दृष्टि भाव और युग बोध भी पहले की अपेक्षा पूर्णतया भिन्न थे, स्वतन्त्र्योत्तर युगीन नाटक सार्त, कामू, फ़ाक्नर, ऐंग्नीयंगमैन आदिसमकालीन विचारकों से पर्याप्त प्रभावित दिखायी देता है । जहाँ पर कुछ विद्वानों ने प्राचीन साहित्य की आदर्शवादिता का विरोध किया वहीं पर प्राचीन परिपाटी के मोह में कुछ साहित्यकारों ने उसे नयेढंग में प्रस्तुत करने काप्रयास किया, "ईश्वर मर गया" पाश्चात्य दार्शनिक "नीत्शे" की इसघोषणाका उदघोष विश्व साहित्य के लिए भले कोई नवीनता न हो परन्तु हिन्दी साहित्य के लिए नवीनता अवश्य थी, प्रत्येक नये विद्रोह के आरम्भ में गत्यावरोध लक्षितहोताहै, क्योंकि प्राचीन जड़ मान्यताओं पर इस गत्यावरोध कोतोड़ने के लिए ही प्रहार किया जाता है । प्राचीन आदर्शवादिता का परित्याग अर्थात प्रगतिवाद, पूंजीवाद तथा वर्गनैतिकता के प्रति प्रबुद्ध लेखक की आत्मचेतना के परिणामस्वरूपहुआ । इन प्रगतिवादी साहित्यकारों ने पुरातन काव्य शास्त्रीय मान्यता प्राप्त उच्च वर्गीय धीरोदात्त, धीरललित, नायक काबहिष्कार, कर प्राय: निर्धन असभ्य अशिक्षित श्रमिक, तथा कृषकों को नायक बनाया । ईश्वर और धर्म पर सर्वप्रथम

प्रहार कर नई चिन्तन धारणा प्रस्तुत की । मनुष्य के त्रस्त दुखी, सन्तप्त, पीड़ित और अभावग्रस्त होने के कारणों को सामाजिक व्यवस्था में खोजा जा सकता है ।

आधुनिक मूल्यों के परिवर्तित होने के परिणामस्वरूप एवं नवीन मूल्यों के अन्वेषण हेतु काव्य और शिल्प के परिवर्तनों से हिन्दी नाटक भी अछूता नहीं रहा । नाटकीय भाव व्यंजना, चरित्र चित्रण, और अन्तर्द्वन्द्व के स्थान पर तर्क-वितर्क को अधिक स्थान मिला । पश्चिमी नाट्य समीक्षा में अरस्तू, होरेस, बैलियस के बाद फ्रान्स, जर्मनी, और इंग्लैण्ड में जो दौर चला वह जीवन्तता से परिपूर्ण था, इस प्रकार नाट्य बोध की नवीन शैलियों में जहां नवीन मनोवैज्ञानिक आविष्कारों का योगदान रहा है, वहीं पर पाश्चात्य प्रयोगवादी नाटककारों का भी पूरा प्रभाव पड़ा है । इसके साथ साथ एक बात स्पष्ट और सर्वग्राह्य है कि जो नाटक नाटकों की परम्परा को छोड़कर लिखे जायेंगे, उनकी आलोचना भी स्वीकृत परम्परा को छोड़कर करनी होगी । इसप्रकार परम्परा से हटकर लिखे जा रहे नाटकों की समीक्षा के रूप में एक नई आकृति उभरकर सामने आरही है । अंक एवं दृश्य योजना विहीन नाट्य संधियों एवं अर्थ प्रकृतियों से विमुख नाट्यसर्जनाओं और रस निष्पत्ति के सिद्धान्तों की अवहेलना कर लिखे जा रहे नाटकों की निन्दा आज नहीं होती । क्योंकि आज के सन्दर्भ में प्राचीन मूल्यों के खोखलेपन और टूटन के प्रमाण स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। लिहाजा इस दशक के ज्यादातर नाटक अंक दृश्य योजना विहीन पंच सन्धियों और अर्थप्रकृतियों बहुत दूर हैं । जीवन की इस आपाधापी और पारस्परिक असम्बद्धता ने नाट्य रचना के एकसर्वथा अप्रत्याशित और नवीन शिल्प को जन्म दिया, आज जिसे हम लघु नाट्य भी कह सकते है ।

1. बदलती सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों के साथ बदलते नाट्यशिल्प :-

आज शिल्प के धरातल पर न तो पारस्परिक तीन अंकों के

के विस्तार वाले नाटकहैं । और न तो एकांकी की तरह क्षणिक संक्षिप्त और एकायामी बदलती हुई परिस्थिति और मानसिकता को अभिव्यक्त करने के लिए जब नये से नया शिल्प समर्थ नहीं हुआ तो समकालीन नाटककारों ने उसे अपने ढंग से व्यक्त करना शुरू किया । इस अभिव्यक्ति के बिना वह अपने मानसिक दबाव से मुक्त ही नहीं रह सकता था, आदमी के भीतर उभरते हुए पशुमन कोवह शुतुरमुर्ग, तीसरा हाथी, तिलचट्टा, तेंदुआ, सम्पसांप, बुलबुलसराय, दरिन्दे, कुत्ते, तू-तू, नरसिंहकथा, नागपास, भस्मासुर, अभी जिन्दा है, घास औरघोड़ा, आदि जैसे बीसियों नाटकों में प्रयुक्त पशुप्रतीकों और उनमें निहित व्यंजनाओं द्वारा व्यक्त किया गया है । अभिव्यक्ति के इस नये शिल्प ने नाट्य लेखन के धरातल पर उसके संरचनागत शिल्पको पर्याप्त रूप में प्रभावित किया है। आदमी के पशमन को व्याख्यायित करने के लिए पशु प्रतीक वाले शीर्षक देदिये गये हैं । चरित्रों के रूप में पशुओंकी भी भूमिकायें दी गयी हैं, और व्यंग्य द्वारा मनुष्य के वर्तमान पर एक प्रश्नचिन्ह रख दिया गयाहै । इस प्रकार मानव मूल्यों का यह विघटन पशु प्रतीकों वाले इन नाटकों की शिल्प चेतना है, अपनेअकेलेपन के अहसास को व्यक्त करने के लिए इस युग के नाटक कारों के पास एक नाटक से बढ़िया शिल्प और क्या हो सकता है अपने आप से बात करताहुआमंच का एकाकी चरित्र जीवन से मनुष्य की विडम्बना का सबसे बढ़िया शिल्पगत साक्षी है । तीन एकांत और रामबाण आदि इस शिल्प के प्रमाण है।इन नाटकों में नाटककारों द्वारा अपनी बात को अधिक से अधिक प्रभावशाली ढंग से सम्प्रेषित करने के लिए जो टेकनिक अपनायीगयी है, वही शिल्प है। समकालीन नाटकों की साधना में रचनाशिल्प का चेतना एक सर्वथा भिन्न संवेदना से अनुप्राणित होता रही है । एक ओर हमारे सामने व्यक्तिगत पुजा ही रहने दो, सबरंग मोहभंग आदि जैसे नाटक हैं, जिनमें केवल दृश्य संख्यायें भरदी गयी हैं । तीसरा हाथी एक और द्रोणाचार्य, बुल-बुल, सराय, एक और अजनबी, जैसे नाटकहैं ।

जिनमें केवल बीच में मध्यान्तर की योजना कर नाटक को दो भागों में बांट दिया गया है या नाटक को दो अंकों में विभाजित कर रखा गया है। ताकि स्वतः प्रथम अंक के बाद अन्तराल आ जाये। तीसरी और दुलारी बाई, योतृफिथ फुल्लों, आज नहीं कल, लौटन, जैसे नाटक जिसमें किसी प्रकार का विभाजन ही नहीं मिलता एक घटना की तरह नाटक शुरू होता है, और खत्म हो जाता है। जीवन के अनिश्चय की छाप शिल्प के अनिश्चित रूप विधान पर अवश्य देखी जा सकती है। रंसगन्धर्व, रोशनी, एक नदी है, अब्दुल्ला दीवाना, आदि जैसे नाटक इसी युग की देन है। जिनमें प्रतीकात्मकता, एब्सर्ड नाट्यशिल्प, संस्कृत नाटकों का प्राधान और शास्त्रीय शिल्प तथा लोक नाट्यों की रूढ़ि और शिल्पगत लचीलेपन का प्रयोग एक साथ किया गया है। जैसे कविता में पहले मुक्तछंद स्वीकार कर लिया गया था ठीक उसी प्रकार मानसिक चेतना की अभिव्यक्ति के लिए नाटक में वैसे ही मुक्त शिल्प स्वीकार कर लिया गया है। यह सभी रूढ़ि परम्परा विधानको तोड़कर, वर्जनाओं के प्रति उपेक्षा भाव दिखाकर प्रस्तुत किया गया शिल्प विधान है। मुक्तशिल्प के पीछे काम करने वाली, अन्तश्चेतना को इन बिन्दुओं पर सहज ही परिलक्षित किया जा सकता है। यौन सम्बन्धों का उन्मुक्त चित्रण, गन्दे अश्लील और भद्दे, वाक्य विन्यासों का यथार्थ प्रयोग शास्त्र द्वारा वर्जित युद्ध, प्रेम अहिंसा, हत्या, बलात्कार, आदि जैसे वर्जित बेपर्द दृश्यों का खुलकर तथा शिल्प में प्रयोग हुआ है। अनिश्चय के जीवन से ऊबे हुए लोग सभी प्रकार की वर्जनाओं का तिरस्कार कर जीवन के सभी प्रकार के अनुभवों को भोगकर तृप्त हो जाना चाहता है। मणिमधुकर ने शिल्प चेतना सजगता का बड़ा बढ़िया उदाहरण प्रस्तुत किया है। उन्होंने नाटक के चरित्रों का नामन देकर अ ब स द जैसे वर्ण प्रतीक दे दिये हैं। ताकि वह ऐसे लोगों की खोई हुई पहचान को भी व्यंजित करें। आज के नाटकों की कथा का नायक पहले की तरह महापुरुष व्यक्ति न होकर

अदना से अदना आदमी भी नायक बन जाता है । इसके विभाजन साधारण की वस्तुस्थिति और उसके जीवनसंघर्ष का चित्रण सम्भव ही नहीं थी । इस लिए इस सिलसिले में जहाँ एक ओर जीवन यथार्थ का चित्रण करने वाले राजनीति, भ्रष्टाचार, शोषण आदि को विषय बनाकर नाटक प्रस्तुत किये गये वहाँ पर ऐतिहासिक और पौराणिक कथनाओं का शिल्प के तौर पर ऐसा आयोजन प्रस्तुत किया गया, कि वर्तमान की बिन्दुपताओं को वह बेपर्द कर दे । राजा बलि की नई कथा में, भगवान पात्र है, और स्वयं सब देखते और भोगते हैं। शम्बूक की हत्या में शम्बूक का शव लेकर शम्बूक का पिता आज के न्यायालय में इन्साफ मांगता फिरता दिखायी देता है । अग्निलीक राम के चरित्र की साम्यवादी व्यवस्था प्रस्तुत करता है । एक सत्य हरिश्चन्द्र में लौका राजा इन्द्र को अपनी परीक्षा देने के लिए मजबूर कर देता है, वह मानता है कि हरिश्चन्द्र ही हमेशा सत्य की परीक्षा क्यों दे? इस प्रकार ऐतिहासिक कथाओं में कई शिल्पगत मोड़ आये हैं । अब राजाओं का चरित्र गायन न बनकर मानव चरित्र का विश्लेषण प्रस्तुत करना मुख्य हो गया है । "अरे ओ मायावी सरोवर, का राजा घटना बस स्त्री बन जाता है, और उन्हीं अनुभवों से होकर गुजरता है, यह पुरुषों में स्त्री की समझ का पैदा होना है । "आठवाँ सर्ग" महाकवि कालिदास की जीवनी नहीं सत्ता और साहित्यकारों के बीच की दाँव पेच हैं। कथा शिल्प के धरातल पर आज यह जो बदलाव दिखायी देता है, उसका प्रभाव भाषा के धरातल पर भी परिलक्षित होता है। एब्सर्ड शैली के भाषा प्रयोग में एक ही बात को बार-बार दुहराना शब्दों की अर्थहीनता और भाषा की व्यर्थता सिद्ध करता है ।

अभिनय में भाषा का बहिष्कार कर रचना शिल्प द्वारा एक ऐसे नाट्य का आविष्कार किया गया है, जिसमें न्यूनतम भाषिक प्रयोग द्वारा पूर्ण अभिव्यक्ति सम्भव हो । भाषा आज भावों और विचारों को अभिव्यक्त

करने में नहीं, उसे छिपाने के काम में आती है। भाषा की इस विसंगति को अभिव्यक्ति देते वाले अनेक शिल्पगत प्रयोग हुए हैं। जिनमें चरित्र अनुभव कुछ और करते हैं, और संवाद कुछ और होते हैं। भाषा के अर्थ और अभिनय को अर्थ के विपर्यय द्वारा जीवनमें भाषा प्रयोग के इस विपर्यय को अभिव्यक्ति मिली है। आदमी के मुखौटेवाली जिन्दगी, उसकी दूसरी जिंदगी की शिल्पगत अभिव्यक्ति, नाट्य रचना शिल्प, में दूसरे कथानक के उपयोग द्वारा की गयी है। ठहरी हुई जिन्दगी, एक सत्य हरिश्चन्द्र, रामकी लड़ाई, रावण लीला आदि जैसे नाटक इसके अच्छे उदाहरण हैं। और एक और द्रोणाचार्य, जिसमें द्रोणाचार्य और प्रो॰ अरविन्द की कथा समानान्तर भाव से चलती है, बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव से अतीत और वर्तमान का सम्बन्ध निरूपित करती है। एक सत्य हरिश्चन्द, और राम की लड़ाई, जैसे नाटक भी इसी शिल्प चेतना के उत्कृष्ट उदाहरण हैं, लौका, देवधर, आदि गांव के भी चरित्र हैं, और सत्य हरिश्चन्द्र नौटंकी के वे दोनों भूमिकायें एक साथ निभाते हैं। "रामकीलड़ाई" में राम लीला के लिए पात्र एकत्र होते हैं। राम लीला करते-करते राम लीला भी करने लगते हैं। दोहरे व्यक्तित्व का और इससे बढ़िया शिल्पगत प्रयोग और क्या हो सकता है।

3॰ रंगमंच:-

प्राचीन काल में नाट्य रचनायें प्रायशः भरतमुनि के नाट्यशास्त्र के अनुरूप ही होती थी, भारतीय रंगमंच की परम्परा अति प्राचीन होने परभी यह शब्द नवीन है। भरत मुनि के नाट्य शास्त्र तथा अन्य परवर्ती नाट्य शास्त्रीय ग्रन्थों में इसका उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु रंगपीठ तथा रंगशीर्ष की चर्चा मिलती है। नाट्य मंडप के आगे पृष्ट भाग को रंग शीर्ष औरपीछे के भाग को नेपथ्य कहा जाता है।॰ रंगशीर्ष और रंगपीठ वस्तुतः दोनों एक ही रंग के दो आगे पीछे वाले भाग हैं, रंग में मंच शब्द केजुड़

जाने से उसे रंगममंच के नाम से जाना जानेलगा। आचार्य अभिनव गुप्त के मत से रंग (नाट्य मंडप) आयताकार अथवा विकृष्ट होता है 2. आचार्य रामचन्द्र गुण चन्द्र ने रंग शब्द का प्रयोग नाट्य मण्डप के रूप में किया है। 3. हिन्दी में रंगपीठ, रंगशीर्ष, रंगमण्डप आदि शब्दों से नाट्य मंडप अथवा रंगभूमि की पूर्ण व्यंजना स्पष्ट न होने के कारण एक ऐसे शब्द कीआवश्यकता अनुभव हुई, जिससे रंगकार्य के समस्तस्थल कोग्रहण किया जा सके। आधुनिक युग में रंगमंच काक्षेत्र केवल मंच और दृश्य सज्जा तक ही सीमित नहीं है, अपितु रंगमंच का विस्तृत क्षेत्र होने के कारण अनेक तत्वों को समाहित किया गया है। अभिनेता के स्वभाव, प्रवृत्ति, व्यक्तित्व के अनुरूप पात्र चयन अभिनय, अंग संचालन, गति और क्रिया हावभाव, वेशभूषा, रूपसज्जा, एवं कक्ष, संवाद योजना, दृश्य विधान, रंगममंच सज्जा, प्रकाश व्यवस्था, पार्श्वसंगीत, प्रेक्षकोंके बैठने का स्थान, ध्वनि प्रभाव, रंगशाला, का आकार, बनावट, दृश्य बंध, नेपथ्य, पर्दे की व्यवस्था आदि।

जीवनऔर जगत के बदलतेहुए दृष्टिकोणों बदलते हुए मानवमूल्यों के साथ साथ बदलते हुए साहित्य और आलोचना के मानों नेआगे चलकर यह सिद्ध किया कि नाटक केवल मनोरंजनही नहीं है जीवन की जीवन्त व्याख्या है, बदलतीहुई मूल्य चेतना ने पुराने मूल्यों को समकालीन जीवन के लिए खोखला और व्यर्थ साबित कर दियानाटक औररंगमंच को जोड़कर नयी समीक्षा आरम्भ हुई, नई समीक्षा केपाठ्य नाटकों कीअवमानना हुई, नाटक और रंगमंच केसम्बन्धों के अन्वेषण एवं नाट्य समीक्षा के प्रतिमानों कोलेकर इधरजोसवाल उठे हैं, उसके सन्दर्भ में मोहन राकेश द्वारा प्रस्तुत किया गया चिन्तन "रंगमंच" और शब्द विशेष महत्वपूर्ण है आजनाटक को जनसाधारण के समक्ष लाने, दर्शक और नाटक केबीच की खाई को पाटने लोकमंच और लोकशैली को भारतीय परिवेश में और अधिक महत्वपूर्ण बनाने की चेतना रंग कर्मियों में प्रमुख है। अभिनय में भाषाका बहिष्कार कर मनोशारीरिक

--102

रंगमंच के रचनाशिल्प द्वारा एक ऐसे नाट्य का आविष्कार कियागया है, जिसमें न्यूनतम आर्थिक प्रयोगद्वारा पूर्ण अभिव्यक्ति सम्भव हो सके । आज नाटक का ढांचा जड़मूल के साथ बदल चुका है । स्थापत्य मेंइतने गम्भीरपरिवर्तनों का सहज प्रतिफलननाट्यशैली के वैविध्य में देखाजा सकता है । आज कानाटक पूर्ण सांकेतिक, प्रतीकात्मक होने के साथ साथअभिनयात्मक अधिक है । रंगशाला और प्रदर्शन धर्मी अन्य बाध्यताओं का भी बहिष्कार किया गया है । जिसके फलस्वरूप नाटक आज चौराहे पर खड़ा है । जहां चारों दिशाओं से आने वाले जनसाधारण से वह जुड़ने कीकोशिश कर रहा है। छतों पर, काफी हाउसों तलघरों, गलीकूचों, मैदानों कहीं भी प्रस्तुत किये जाने वाले नाटकों कीपरम्परा आजहमारे सामने है । रंग संरचना प्रस्तुत करने का एक आवश्यक अंगहै। प्रकाश जिसे समसामयिक नाटकों ने प्रकाशकी विभिन्न शिल्पगत अभियोजना की सम्भावनायें प्रस्तुत की, पर्दा गिरने ,उठाने की जगह दृश्यपरिवर्तन के लिए मंचीय क्रिया व्यापार को अलगबांटने के लिए स्मृति दृश्योंको ,प्रस्तुत करने के लिए किसी घटना या चरित्रविशेष के अभिनय एवं मनोभावों की ओर दर्शकों का ध्यान केन्द्रित करने के लिएमंच पर फंतासी दृश्यों या अतिनाटकीय स्थितियों को ,प्रस्तुत करनेके लिए,प्रकाश व्यवस्था का शिल्पगत उपयोग किया है ।

4. रंगीय उपकरण:-

जहां पर संस्कृत रंगममंच अभिजात्य रंगमंच था, जो राजभवनों से सम्बद्ध होताथा, वहीं पर समकालीन रंगममंच चौराहे पर खड़ा सबसे जुड़ने का प्रयास कर रहा है। पारसी रंगमंच में दृश्य -सज्जा जहां भड़कीले चमत्कारिक, चकित कर देने वाले दृश्यों की योजना होती थी, "देवहवा में उड़ते थे,पटखा फटने परजंगल औरसिंहासन

चलते थे । ------पुष्पक विमानों की हवा में उड़ाने और आकाश से परियों को उतारने के लिए जटिल यन्त्र प्रयोग में लाये जाते थे, इस प्रकार के चमत्कारिक दृश्य और उक्तियाँ उन्नीसवीं शताब्दी के लंदन के डूरीलेन थियेटर की भड़कीली दृश्य सज्जा की सीधी नकल थी 4. परन्तु समसामयिक नाटकों की रंगमंच सज्जा के उपकरण प्रतीकात्मक हैं । जगदीश चन्द्र माथुर का नाटक "पहला राजा" में आगे और पीछे दो भागों वाले वृहदाकार मंच पर प्रकाश व्यवस्था की सहायता से अनेक दृश्य दिखाये जा सकते हैं । पहली मंच सज्जा में मंच के पृष्ठभाग में एक टीला है, टीले के ऊपर एक चबूतरा है, चबूतरे के ऊपर एक मंजूषा है, जिसमें सफेद वस्त्र से ढका हुआ एक शव है। 5. चबूतरे पर रखा मंजूषा में शव ब्रिटिश सत्ता का प्रतीक है, पृष्ठभाग में बालू के टीले पर मजदूरों की "सिलुएट आकृतियाँ" आधुनिक सन्दर्भों की ओर संकेत करती है । इसी तरह आधे अधूरे मे अधटूटे टी सेट, बिखरे हुए सामान, फटेहाल, उपकरणों की स्थिति, परिवार और उनके सदस्यों की ओर इंगित करती है । कमरे में सभी उपकरणों के रिश्ते टूट चुके हैं । कई तरह की असुविधाओं से समझौता करके सबको इस्तेमाल के लिए जोड़ लिया गया है । 6. इस्तेमाल के लिए उपकरणों का यह जोड़ परस्पर रिश्तों में टूटे हुए किन्तु लाचारी में एक जगह जुड़े हुए परिवार के सदस्यों का ही संकेत देता है, रंग प्रस्तुति के दौरान इन उपकरणों पर बार बार प्रकाश छोड़कर उनकी सांकेतिकता को और सहज बनाने की रंगयुक्ति बड़ी कारगर सिद्ध हुई है । सुरेन्द्र वर्मा के "द्रौपदी" नाटक की मंच सज्जा कलात्मक है दो अंकों के इस नाटक में चार दृश्य बंधे हैं । सभी उपकरणों को एक मंच पर या एक साथ व्यवस्थित कर दिया गया है । मुद्राराक्षस के तिलचट्टा नाटक में एक पूर्णाकार अंक और एक ही दृश्यबंध है । मंच सज्जा में पति-पत्नी का बेडरूम है । जिसमें उपकरण के रूप में दो सटे हुए पलंग बिछे हैं इसी मंच सज्जा से नाटक में दो स्वप्न दृश्य उभरते हैं, जिसमें एक अन्धकारपूर्ण और जंगल का है और दूसरा घर का ।

आधुनिक यथार्थवादी, आन्तरिक युग में मंचीय रंग सज्जा भी प्रतीकवादी होगयी है, नाटक कार मंच परलम्बे संवादों अथवा पात्रों द्वारा पात्रों की स्थिति और चरित्र को अभिव्यक्त न करके केवल छोटे से प्रतीक के माध्यम से उसेबखूबी स्पष्ट कर देता है।

एक लैम्प पोस्ट, सड़क का कुआँ, गांव का प्रतीक बनकर उभरता है। आधे-अधूरे नाटकमें टूटा टी सैट, टूटीकुर्सियाँ, फटी किताबे, आदि पारिवारिक आर्थिकतंगी के साथ साथ पात्रों की मनस्थिति तिक्तता व अन्र्द्वन्द को स्थिति को अभिव्यक्त करती है।

रामेश्वर के चारपाई नाटक में गन्दे कपड़ों का गट्ठर, टूटी सूखी टहनियाँ, ठूंठ आदिप्रतीक आधुनिक जीवन की विसंगतियाँ जटिलताओं तथा नीरस होते जा रहे पारिवारिक रिश्तों को निःसंकोच खोलकर रख देते हैं। रमेश बक्षी का नाटक "तीसरा हाथी" में "बंजर" की ध्वनि पिता के अत्याचारों को कुरेदकर रख देती है, दया प्रकाश सिन्हा कृत कथा एक कंस की नाटक में जनता की चेतना की प्रतीक "बाँसुरी की धुन" अत्याचारी सत्ताके प्रतीक रूप कंस की नींद, छीनकर उसे धराशायी करदेती है, इसी प्रकार डा॰ लाल कृत रामकी लड़ाई में उपस्थित शिवधनुष भारतीय एकता, भाईचारे, और आदर्श के रूप में वर्णित हुआ है। ज्ञानदेव अग्निहोत्री कृत "शुतुरमुर्ग" मे शुतुर्मुर्गीय सिंहासन विलासिता पूर्ण राजनीति और सत्ताका प्रतीक बन गया है। इस प्रकार स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दीनाटक का रंगमंच अपने प्रतीक विधान द्वारा उन भावों को सटीक अभिव्यक्ति प्रदान कर देता है, जिसे संवादों औरअभिनय के माध्यम से सहीरूप में प्रस्तुत करपानाकठिन कार्य है।

बृजमोहन शाह के त्रिशंकु नाटक में मंच सज्जा प्रतीकात्मक है। मंच विधान पृष्ट मध्य और अग्र इन तीन भागों में विभक्त है, मंच पर सबसे पीछे दो दिशा सूचक जो युनिवर्सिटी और इम्पल्वायमेन्ट के है लगे हैं, दोनों दिशा

सूचकों के मध्य में एक प्रश्नचिन्ह बना हुआ है । यह प्रश्नचिन्ह आधुनिक पढ़े लिखे बेरोजगार युवकों का सार्थक प्रतीक है । जो विश्वविद्यालय की डिग्री और रोजगार कार्यालय के बीच में पौराणिक चरित्र त्रिशंकु की भांति लटका हुआ है । मंच के मध्य भाग में एक चन्द्राकार तख्त है, और मंच के अग्रभाग में तीन-चार कुर्सियाँ एक स्टूल, और तीन चार पेटियाँ हैं । इसके साथ ही कूड़ादान, हमारे दफ्तर, "आधे बाँटे छेड़ी" के पट्ट तथा एक लाल झंडी है ये सभी उपकरण सार्थक और सांकेतिक हैं जो प्रस्तुति केबीच बीच में अपनी उपयोगिता प्रमाणित करते हैं 8. इस प्रकार समसामयिक नाटककारों ने रंगीय उपकरणों को प्रतीकात्मकढंग से प्रस्तुत करनाओं के क्षेत्र में एक नई सिद्धि हासिल की है ।

5. रंग संकेत:-

यहाँ पर रंग से संकेत कातात्पर्य मंच सज्जा सेहै । मंच सज्जा नाट्य वस्तु काएक सूक्ष्म संकेत है । "उनरंग कर्मियों का कला को मंच सज्जाकहते है जिसमेंमुख्यत: दृश्यबन्ध और प्रकाश आयोजन का समावेश रहता है ------नाटककार का लिखा हुआ नाटकप्रेक्षकों तक ले जाने वालेअभिनेताओं को आवश्यक वातावरण देने का कार्य मंच सज्जा द्वारा किया जाता है । 9. इसे मंचसज्जा द्वारा नाटक में निहित वस्तु सत्यको सम्पूर्णरूप में अभिव्यक्त और सर्वसाधारण केलिए सुबोध बनाया जाता है । मंच सज्जा चाहे जैसी भी हो उसमें रंग प्रस्तुति के दरम्यान ऐक ऐसी शक्ति उभरतीहै, जोमंचीय रंग कार्यको क्रियाशील रखती है, मंचसज्जा के विषय में नाटककार द्वाराप्रदत्त संकेत एकठोस आधार होता है। सरलीकृत, यथार्थवादी, विपुल अलंकृत, या चमत्कारपूर्णमंच सज्जा का कोई पक्ष हो सकता है। "दृश्यांकन कार कोसाकार करनेके लिए दीवारों दरवाजों खिड़कियों, खम्भों, हत्थों आदि केलिए वस्तु सम्बन्धी ब्यौरों सिंहासनों, आसनों बिछायतों तथा अन्य उसबाब का औररंगों तथा दमागों का अध्ययन करता है । 10. समकालीन नाटकों

की प्रतीकात्मक रंग सज्जा अपनी अनिवार्य स्थितियों में दृश्यानुकूल उपकरणों वस्तु सम्बन्धी ब्यौरों के गठन में पर्याप्त सफलता हासिल कर चुकी है मंच सज्जा के विकास की दिशा उत्कर्ष की उससीमा तक पहुँच चुकी है, कि आज केवल मंच उपकरण अथवा सज्जाविहीन सामान्यअभिनय स्थल की माँग बहुत जोरों से होने लगी है। सांकेतिक तथा प्रतीकात्मक रंग सज्जा के लिए लहरों का राजहंस, आधे-अधूरे, त्रिशंकु, रसगन्धर्व, आकाश झुक गया, कुत्ते आदि नाटक उल्लेखनीय हैं। पृथ्वीराज कपूर और उनके सहयोगियों का "दीवार" नाटक तीन अंकों का एक सफल नाटक है। पहले अंक में दो, दूसरे में तीन, और तीसरे में मात्र एक दृश्य है। इनसभी दृश्यों के लिए एक ही स्थायीऔर प्रभावोत्पादक दृश्यबंध है। मंच सज्जा सांकेतिक अधिक है। पहले अंक में एकबड़ा कमरा है, जो तख्त पाटे और मूढ़े आदि देशी सामानों से युक्त है। दूसरे अंक में वही कमरा विलायती, कीमती उपकरणों, से शानदार ढंग से सजाया गया है। 11. कमरे के बीचोंबीच पृष्ट भाग से लगी भारत माता की मूर्ति है। तीसरे अंक में उसी कमरे में एक दीवार खड़ी कर दी गयी है, जिससे भारतमाता की मूर्ति आधी आधी दिखायी देती है। मंच सज्जा में देशी उपकरण, स्वदेशी स्वरूप में विलायती उपकरणे, अंग्रेजी प्रभाव के भारत माता की मूर्ति, देशभक्ति और दीवार, भारत के विभाजन के सांकेतिक सूत्र हैं। इसी तरह लक्ष्मीनारायण लाल के मादा कैक्टस में "कैक्टस" के तीन पाट्स सांकेतिक हैं। उनमें दो मादाकैक्टस के पाट्स हैं, और एक नर कैक्टस का जो नाटक के तीन प्रमुख पात्रों सुजाता, आनंदा, और अरविन्द को संकेतित करते है। दूसरे अंक में मन्च सज्जा में कैक्टस के दो ही पाट्स रह जाते हैं। जो आनन्दा और अरविन्द को संकेतित करते हैं। मणिमधुकर के रसगन्धर्व नाटक में टूटे फूटे और पिचके बर्तन, बायी ओर रखा कचरे का ढेर और दायी ओर रखे सौन्दर्य के प्रतीक गमले की व्यवस्था के छोटे और बड़े लोगों को संकेतित करतेहैं। 12. डा॰ चन्द्र के "आकाश झुक गया" नाटक की मंच सज्जा सांकेतिक औरप्रतीकात्मक है। कक्ष में अग्र भाग में रखी हुइ इजारेधारदगलमें रखी हुई सामान्य कुर्सियाँ, गाजा,

चरस के दो तीन डिब्बे, पर्स, स्टैण्ड पर रखी हुई भरी चिलमें, सामने दीवार पर लिखा हुआ "मैं" शब्द सांकेतिक अभिव्यक्ति देता है । मैं समाज के संकीर्ण स्वार्थ परक आधुनिक रूप का प्रतीक है। और चिलम सांसारिक - कामनाओं का प्रतीक है। जहाँ भोग की अबाध गति है, मंच सज्जा के विरोधाभासी उपकरण स्वामी पुष्पानन्द के पाखण्डी चरित्र का सहज बोध देते हैं । मंच सज्जा सहज सार्थक और सांकेतिक है । सुशील कुमार सिंह का नाटक "सिंहासन खाली है, एक ही अंक का प्रयोगशील नाटक है । उपकरण विहीन मंच सज्जा में केवल एक खाली सिंहासन है । 13. खाली सिंहासन दर्शकों में तीव्र जिज्ञासा जगाता है । दया प्रकाश सिन्हा के कथा एक कंस की, नाटक में खुली मंच सज्जा है, दो अंकों के इस नाटक में दो भिन्न स्थल हैं, एक राजमहल की खुली छत और दूसरा वन्य प्रदेश का एक विशाल वृक्ष, 14. डा. चन्द्रकृत कुत्ते नाटक दृश्यबंध का नाटक है । नाटक की मंच सज्जा प्रतीकात्मक और पारम्परिक है । सामने की दीवारा पर जाती हुई एक महिला सामने से रोकते हुए दो कुत्ते और पीछे से साड़ी खेंचते हुए एक कुत्ते के चित्र अंकित है । जो सार्थक और सांकेतिक हैं । इनके द्वारा कामकाजी महिलाओं के प्रति कुत्तों जैसा आचरण करने वाले अधिकारियों को सांकेतिक रूप में अभिव्यक्त किया गया है ।

6. रंगदीपन:-

रंगप्रस्तुति में वेशभूषा, रूपसज्जा आदि पर जितना ध्यान दिया जाता है उतना ही रंगदीपन पर भी । रंगदीपन रंगमंच का एक प्रमुख अवयव है । जिस प्रकार अभिनेता के वस्त्रों का चयन करते समय उसके रंग पर ध्यान दिया जाता है, उसी प्रकार प्रकाश व्यवस्था में रंगीन वस्त्रों से न केवल शुभा-शुभ, सुख, दुख, अथवा जय पराजय का बोध होता है, वरन पृथक विचारों मत मतान्तरों का भी बोध होता है । वस्त्रों

के रंग चयन से व्यक्ति की सुरूचि, मनोदशा, विचार आदि का सहजही बोध होता है ।5. इस सन्दर्भ में परम्परा भी अनुकरणीय होती है जैसे श्वेत रंग पवित्रता का, लाल रंग अनुराग का, केसरिया रंग वीरता का हरा रंग समृद्धि और प्रसन्नता का, द्योतक होता है । राजनीतिक विचार से श्वेत रंग राष्ट्रीयता का, लाल रंग साम्यवाद का, काला या पीला रंग हिन्दू राष्ट्र वाद का प्रतीक है । सम सामयिक युग में रंगीन आलोक और रूप सज्जा का सम्बन्ध आधुनिक रंगमंच पर महत्वपूर्ण हो गया है । रंगीन आलोक के माध्यम से पात्र के चेहरे पर रंग दीपन किया जाता है । जिससे एक चमकीला पन आ जाताहै । यह रंगदीपन विभिन्न प्रकार के रंगो का प्रकाश चेहरे पर डाला जाता है । विद्युत प्रकाश की उपलब्धि केपूर्व प्रकाश व्यवस्था रंग प्रस्तुति का एक माध्यम मात्र थी, किन्तु आधुनिक युग में प्रकाश योजना रंगमंच की एककला के रूप में विकसित हुईहै ।

"आज कल नाटकों में भी प्रकाशके माध्यम से सिनेमा तकनीक की तरह स्लाइड्स प्रयुक्त होने लगी हैं, कांच की सभीछोटी बड़ी स्लाइडों पर अभिनेताओं के तथा निर्देशक संगीत निर्देशक, प्रस्तोता, रंगलेपन, कार, प्रकाश संचालक आदि केनाम लिखकर उस पर प्रकाश की किरणें फेंकी जाती है जो सफेद पर्दे पर फिल्म तकनीक सा आभास देती हैं । 16. प्रकाशयोजना आधुनिक रंग प्रस्तुति को अत्यन्त सहज सुगम और सम्मोहक आयाम प्रदान करती है । मंच सज्जा और रूप सज्जा का रंगदीपन पूर्ण रूप से रंगीन और यान्त्रिक प्रकाश पर निर्भर रहता है, समसामयिक युग में प्रकाश यन्त्रों का रंगमंच पर अधिकाधिक उपयोग हो रहा है । उनमें पुंज प्रकाश (स्पाटलाइट) पूरदीप या तीव्र प्रकाश (फ्लश लाइट) प्रभाव प्रक्षेपण दीप, (प्रोजेक्शन लैलटर्न) अनुगामी पुंजदीप (फोलोस्पाट) बाढ़ प्रकाश (फ्लुडलाइट) शीर्ष प्रकाश, संघात उपकरण विस्तृत परावर्तक, (पैरेलल बीम लैलटर्न) (फोकस लैलटर्न, कोमलबिन्दु-

प्रकाशआलोक चित्र ,पृ प्रक्षेपक, आदि महत्वपूर्ण उपकरण हैं । प्रकाश के लिए उपयोगी यन्त्रों में पेजेन्ट,बेबीलाइट, डीमर, सोलर, स्वाचालितबोर्ड, कापसल्स, आदि उल्लेखनीय हैं । सम सामयिक युग के नाटकों के रंगमंच का प्रकाश व्यवस्था अत्यन्त विलक्षण हो गयी है, प्रकाश का अनूठा विस्मय बोधक रंगारंग क्रिया कलाप देखते ही बनता है ।

सुरेन्द्र वर्मा के द्रौपदी नाटक की मंच सज्जा कलात्मक है । दो अंकों के इस नाटक में चार दृश्य बंध है, सभी उपकरणों को एक साथ या एक ही मंच पर व्यवस्थित कर दियागया है। चारों दृश्य पृथक पृथक, प्रकाश वृत्त की सहायता से स्थापित किये जाते हैं, डा. लाल काअब्दुल्ला दीवाना एक ही अंक का प्रयोग शील नाटक है यह सभी प्रकार के मंच पर प्रस्तुत किया जा सकता है । मंच के पृष्ठ औरअग्र भागों को प्रकाश वृत्त के माध्यम से अनेक दृश्यों के लिए अनेक बार उपयोग में लाया जाता है । शंकर शेष का एक और द्रोणाचार्य दोअंकों का नाटक है, प्रो. अरविन्द, विमलेन्दु, औरद्रोणाचार्य इन तीन कथावृत्तों के आधुनिक पुरातन लगभग दर्जनों दृश्य एक हीमंच के विभिन्न भागों से प्रकाश वृत्त कीसहायता से मंचस्थ होते हैं । गिरिराजकिशोरकृत "पुजा ही रहने दो, नाटक में छः दृश्य हैं सज्जा विहीन मंचस्थल से तीन भागोंमें प्रकाश वृत्त द्वारा रंग प्रस्तुति होतीहै, इस प्रकार रंग संरचना को प्रस्तुत करने के लिए प्रकाश का उपयोग किया गया है । कहीं कही पर पर्दा गिराने उठाने की जगह दृश्य परिवर्तन के मंचीय व्यापार को अलगअलग बांटने के लिए स्मृति दृश्यों कोप्रस्तुत करने के लिए किसीघटना या चरित्र विशेष केअभिनय एवं मनोभावों की ओर दर्शकों का ध्यान केन्द्रित करनेके लिए मंच पर फंतासी दृश्यों का अतिनाटकीय स्थितियों को प्रस्तुत करने के लिए प्रकाश व्यवस्था का शिल्पगत उपयोग कियागया है ।

7. अभिनय: वर्जित दृश्यों का अभिनय तथा अभिनय के नये प्रतिमान:-

भरत नाट्य शास्त्र में वर्णित कायिक, वाचिक, सात्विक और आहार्य आदि अभिनय को प्राधान्य न देकर प्रतीकों और संकेतों द्वारा विचारों और संवादों को अभिव्यक्ति सम-सामयिक नाटकों में देखने को मिलती है। यौनसम्बन्धों का उन्मुक्त चित्रण, मंच पर स्नान, चुम्बन, आलिंगन, शयन, अधरपान, युद्ध, हिंसा, गन्दे, अश्लील और भद्दे वाक्यों का एक साथ प्रयोग आज अभिनय माना जाने लगा। शास्त्र द्वारा वर्जित युद्ध, प्रेम, हिंसा, हत्या आदि जैसे वर्जित दृश्यों का खुलकर कथाशिल्प में प्रयोग हुआ है। इसका मूल कारण पारम्परिक वर्जनाओं के प्रति उपेक्षापूर्ण दृष्टि का परिणाम है। अनिश्चय जीवन से ऊबा आजका व्यक्ति सभी प्रकार की वर्जनाओं का तिरस्कार कर जीवन के सभी प्रकार के अनुभवों को भोगकर तृप्त हो जाना चाहता है। अस्तित्व रक्षा के संघर्ष मे यदि आज व्यक्ति ने कुछ खोया है, तो बस अपना चरित्र। भीड़ में शामिल होकर उसने अपनी पहचान खो दी है, थोड़ी सी सुरक्षा और सुविधा की शर्त पर कोई भी आदमी आज आदमीयतासे मुकर जाता है, देश में जिस व्यापक स्तर पर भ्रष्टाचार शोषण, और मूल्यहीनता की स्थिति फैली है, चोरी डकैती, बलात्कार, अपहरण, हत्या, लूट, गोलीचार्ज, दंगा, फसाद, और अन्य अराजकता पूर्ण समाचारों के बीच से वही मूल्यहीनता और जीवन की अराजकता झांकती है। औरआज का नाटककार इन्हीं अनुभवों सेगुजरता हुआ उसे दर्शकों के समक्ष लाने का प्रयास करता है औरजब उसका प्रयास सफल हो जाता है, तब वह प्राचीन नाट्य शास्त्रीय प्रणालीऔरप्रतिमानों का उल्लंघन करता हुआ नये प्रतिमानों औरमानव मूल्योंकी स्थापना करता है। यही कारण है कि आजके नाटकोंकी कथा का नायक पहले की तरह कोई महापुरुष नहीहोता। अदना सेअदना व्यक्ति भी आज नायक बन सकता है।

समकालीन नाटकों से कृत्रिमता और आडम्बर को त्यागकर रचनाकार आम व्यक्ति से जुड़ने का प्रयास करने लगा है। अभिनय, वाणी, वेशभूषा, सब कुछ स्वाभाविक और प्रतीकात्मक रूप में सामने दिखायी देता है। लक्ष्मीनारायण मिश्र, उपेन्द्रनाथ अश्क, उदयशंकर भट्ट, भगवती चरण वर्मा आदि नाटककारों ने अपने नाटकों में साधारण व्यक्ति की साधारण समस्याओं को केन्द्र में रखकर उनके बीच से गुजर रहे और समस्या को झेल रहे साधारण व्यक्ति के अभिनय पर बल दिया, और इस अभिनय में जुड़ी शराब, स्नान, चुम्बन, आलिंगन, शयन, भोजन आदि को मंच पर प्रस्तुत किया।

इस प्रकार बीसवीं शताब्दी के समस्या नाटक के इस युग में अभिनय का परिस्कृत रूप उभरकर सामने आया जिसमें थोड़ी बहुत भावुकता व रोमांस का समावेश था। आधुनिक युग इस नयी अभिनय परिपाटी के साथ रेडियो, टेलीविजन, टेपरिकार्ड, आदि के प्रयोग का नया अध्याय जुड़ा। प्रधान पद्धति आकार भाषा को टेलीफोन के माध्यम से दर्शाया जाने लगा। यह नई अभिनय पद्धति जितनी गहरी मार्मिकता व सजीवता से मानवीय विसंगतियों को उदघाटित करती है उतना रूढ़ अभिनय या संवाद को प्रस्तुत कर पाने में सक्षम नहीं हो पाती।

8· नाट्य रूढ़ियों की प्रतीक पद्धति :-

जीवन की यथार्थवादी समस्याओं को चित्रित करने के लिए सम-सामयिक नाट्य रचनाकारों ने प्राचीन कथा सन्दर्भों पौराणिक आख्यानों, चारित्रिक प्रवृत्तियों तथा वेद एवं पुराण कालीन पात्रों को नये नये सन्दर्भों के अनुसार ढालकर नया अर्थ भरने तथा प्राचीन गाथाओं को आधुनिक सन्दर्भों में सम्प्रेषित करने का प्रयास किया है। अभिमन्यु, एकलव्य, द्रौपदी, द्रोणाचार्य, कंस, दुर्योधन, शंबूक, जैसे ऐतिहासिक

चरित्रों को प्रतीक मानकर सम-सामयिक नाट्य धर्मियों ने सत्ता, कुर्सी और राजनीतिक छल को अपना केन्द्र बिन्दु बनाया और नयी नयी आश्चर्यजनायें प्रस्तुत की।

आधुनिक परिवेश में नाट्य विधा अन्य अनेक रूढ़ियों से मुक्त हो रही है, मंगलाचरण व नान्दी अपने स्वरूप को त्याग चुके हैं। किन्तु कुछ नाटककारों ने लोक नाट्यों के आधार पर परम्परागत नाट्य शैली को अपनाया है, जिसमें डा० लाल का तोता मैना, सगुनपक्षी, मणिमधुकर खेला, पोलमपुर, रसगन्धर्व, बृजमोहन शाह का त्रिशंकु आदि नाटक मुख्य हैं। आधुनिक समाज में जहाँ व्यस्तता या यान्त्रिकता तथा अजनबीपन व्याप्त होता है, वहीं पर नाट्य विधा में शिल्पगत परिवर्तन आ रहे हैं। यही कारण है कि सम-सामयिक नाटकों के संवाद लघु तीक्ष्ण व व्यंग्यात्मक होगये हैं। इस दृष्टि से वामाचार, द्रौपदी, सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, चिलचट्टा, आदि नाटक अपनी पहचान बनाये हुए हैं। मणिमधुकर ने इस शिल्प चेतना की सजगता का बहुत बढ़िया उदाहरण प्रस्तुत किया है। उन्होंने नाटक के चरित्रों का नाम न देकर अ ब स द जैसे वर्ण प्रतीक दे दिये हैं, आज की कथा का नायक पहले की तरह महा-पुरूष न होकर अदना से अदना आदमी, किसान, नेता, मजदूर कुछ भी हो सकता है। "राजावलि" की नई कथा में" भगवान पात्र हैं, वह सब कुछ देखते और भोगते हैं। "शम्बूक की हत्या में शम्बूक का शव लेकर उसका पिता आज के न्यायालय एवं अन्य स्थानों पर इन्साफ मांगता फिरता है। "अग्निलीक" राम के सम्पूर्ण चरित्र की साम्यवादी व्याख्या प्रस्तुत करता है। एक और हमारे सामने व्यक्तिगत पूजा ही रहने दो, सबरंग, मोहभंग, आदि जैसे नाटक हैं, जिसमे केवल दृश्य संख्यायें भर दी गयी हैं, तीसरा हाथी एक और द्रोणाचार्य, बुल-बुल, सराय, एक और अजनबी, जैसे नाटक हैं, जिसमें

के बीच में मध्यान्तर कर नाटक को दो भागों में बाँट दिया गया है, या नाटक को दो अंकों में विभाजित किया गया है। ताकि स्वतः प्रथम अंक के बाद अन्तराल आ जाये। तीसरा और दुलारी बाई पोर्ते, फैथ-फुली, आज नहीं कल, लौटन, जैसे नाटक हैं, जिसमें किसी प्रकार का विभाजन नहीं मिलता। एक घटना कीतरह नाटक शुरू होता है, और खत्म हो जाता है। रस गन्धर्व, रोशनी एक नदी है, अब्दुल्ला दीवाना आदि जैसे नाटक हैं, पंचसन्धियों अर्थ प्रकृतियों और अवस्थाओं से बहुत अधिक दूर हैं, इनमें प्रतीकात्मकता, एब्सर्ड नाट्य शिल्प संस्कृत नाटकों का प्राचीन और शास्त्रीय शिल्प तथा लोक नाट्यों की रूढ़ि और शिल्पगत - लचीलेपन का प्रयोग एक साथ किया गया है।

9. प्रतीक नाटक और उसके विभिन्न तत्त्व:-

नाटक साहित्यिक विधा होने के कारण उसमें साहित्य के सभी तत्त्व विद्यमान होते हैं। पाश्चात्य नाट्य शास्त्र में विचारों, अभिव्यक्तियों और गीतों को भी तत्व माना गया है। भारतीय नाट्य शास्त्रियों ने नाटक के तीन तत्त्व माने हैं। वस्तु, नेता रसस्तेषां भेदकः कहकर दशरूपककार ने कथावस्तु नेता और रस को नाटक के मूलभूत तत्त्व के रूप में स्वीकार किया है। पाश्चात्य नाट्य शास्त्रियों ने अधिक नाट्य तत्त्व बताकर कथावस्तु को मूलभूत तत्त्व के रूप में अंगीकार किया वे तत्त्व हैं, कथावस्तु, पात्र, संवाद, भाषा, देशकाल, रस ~~द्वन्द्व~~ संघर्ष, रंगमंच अभिनय। विश्व साहित्य कोश के अनुसार कथावस्तु घटनाओं का वह संगठन है जिस पर कथा या नाटक की रचना सम्भव है। 18. वास्तव में कथावस्तु ही एक ऐसा तत्त्व है, जिस पर नाटक का समूचा भवन खड़ा है। साथ ही चरित्र को प्रदर्शित करने का एक साधन भी है। और जीवन को देखने की एक

शक्ति भी । भारतीय नाट्य शास्त्रियों की भांति पाश्चात्य नाट्यालोचकों नेभी कथावस्तु को नाटक का महत्वपूर्ण तत्व माना है। अरस्तू के अनुसार कथानक कार्य व्यापार की अनुकृति है क्योंकि कथानक से हमारा तात्पर्य घटनाओं के विकास सेहै । सबसे अधिक महत्वपूर्ण घटनाओं का संगठन । घटनायें और कथानक ही त्रासदी के साध्य हैं, और साध्य का स्थान ही सबसे प्रमुखहोता है । आचार्य भरत के अनुसार इतिवृत्त काव्य का शरीर है जबकि धनंजय के अनुसार रस और नेता के अनुकूल कथा के बिना रूपक की कल्पना करना असम्भव है । 19. कथावस्तु के बाद पात्र चरित्र चित्रण आदि तत्वों का भी विशेष महत्व है । नाटक में कथा के प्रस्तुतीकरणके लिए पात्रों की भावाभिव्यक्ति और विचार विनिमय के लिए संवाद योजना - अनिवार्य है । नाटक कीसम्पूर्ण कथा का विकास, पात्रों का चरित्र चित्रण, उद्देश्य प्राप्ति, देशकाल, का ज्ञान संवादों के माध्यम से होता है। 20. परन्तुसम-सामयिक नाटककारों ने चाहे वस्तु हो या भाषा सबको प्रतीकात्मक बना लिया है, अंक दृश्य योजना विहीन नाटक पंचसन्धियों अर्थ प्रकृतियों, या पुरानी नाट्य शैली कासर्वथा वहिष्कार कर रहा है ।

10. नाटकीय तत्वों में व्याप्त प्रतीक योजना की परिणति:-

नाटक के कथ्य और शिल्प में परिवर्तन होने केसाथ उसके मूलभूत तत्वोंमें भी परिवर्तन आता है । कथ्य और शिल्प के बदलने से भाषा और शैली में भी बदलाव आना स्वाभाविक है । प्रत्येक सफल साहित्यकार देशकाल कोध्यान में रखकर उसकी चिन्तन की सामग्री सेभाषा की सर्जना करता है । भारतेन्दु प्रसाद, मिश्र, माथुर, भारती लक्ष्मीनारायण लाल, राकेशशर्मा, व मधुकर आदि नाट्य भाषा के ऐसे मोड़ हैं, जहां पर भाषा का परिवर्तित स्वरूप स्पष्ट दिखायी देता है।

आज के स्त्री पुरुष के बीचपनप रही पशुता, अतृप्ति एवं

अपूर्णता की भावना को अभिव्यक्ति देने के लिए रचनाकारों ने वस्तु, चरित्र संवाद भाषा शैली आदि को भी प्रतीकात्मक स्वरूप देने का सार्थक प्रयास किया। यही मूलभूत कारण है कि जिससे आजके रचनाधर्मी स्त्री-पुरुष के भीतर उभरते हुए पशुमन को शुतुरमुर्ग, तीसरा हाथी, तिलचट्टा, तेंदुआ, सम्पसांप, बुल-बुलसराय, दरिन्दे, चतुर्भुज, राक्षस, नरसिंह कथा, कुत्ते, तू-तू, नागपाश, भस्मासुर अभी जिन्दा है, घास और घोड़ा, बकरी आदि अनेकों नाटकों में प्रयुक्त पशु प्रतीकों और उनमें निहित व्यंजनाओं को उभारने का प्रयास किया है। आदमी के पशुमन को व्याख्यायित करते हुए पशु प्रतीक और साथ ही उसके शीर्षक भी दे दिये गये हैं। चरित्रों के रूप में पशुओं को भी भूमिकायें दे दी गयी है। और व्यंग्य द्वारा मनुष्य के वर्तमान जीवन पर एक प्रश्न चिन्ह लगा दिया गया है। निश्चय ही मानव मूल्यों का यह विघटन पशु प्रतीकों के माध्यम से एक वास्तविक शिल्प चेतना है। नाट्यरचनाकारों ने अपने नाटकीय चरित्रों को प्रतीक बनाने के लिए विशिष्ट नाम न देकर उन्हें जातिगत सम्बोधनों से अभिहित किया है। आधे-अधूरे में रचनाकार ने पात्रों का नाम न देकर काला सूट वाला, आदमी, एक पुरुष, पुरुष दो, पुरुष तीन, पुरुष चार, स्त्री, बड़ी लड़की, छोटी लड़की, तथा लड़का कहा है। आधेअधूरे के सभी पात्र आधुनिक मनुष्य के खण्डित व्यक्तित्व के प्रतीक हैं।

(क) कथानक:-

कथावस्तु या कथानक नाटक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्त्व है। नाटक के उस भाग को कथावस्तु कहते हैं। जिसके इतिवृत्त में वे सभी घटनायें आ जाती हैं। जिनसे मिलकर कथात्मक साहित्य की विषय वस्तु बनती है। 21. रंगमंच और रंग कौशल की आत्मा (वस्तु है जो कथानक के ढांचे में रहती है, परन्तु यदि हम भरत के नाट्य शास्त्रीय युग की कथावस्तु और समकालीन नाट्य युग की कथावस्तु का तुलनात्मक अध्ययन करें तो हमें संस्कृत युग

कीकथावस्तु का और समकालीन युग के नाटकों कीकथावस्तु में पर्याप्त अन्तर दिखायी देता है। जैसा कि स्पष्ट किया जाचुका है, कि संस्कृत नाटक अतिआदर्श युक्त तथा सामान्य जनता की पहुँच के बाहर थे, इसीलिए उनकी कथावस्तु के अनुरूप भाषाभी धर्म, दर्शन व रूढ़िगत मान्यताओं से बोझिल थी, काव्यात्मक के गहरे जंगल में नाटकीयता खोबैठीथी, "उसमें विशिष्ट दार्शनिक उक्तियाँ हैं, भावी घटनाओं के सूचक व्यंग्यार्थ हैं" सूक्ति, आप्तवाक्य, संकलनत्रय यथेष्ट हैं किन्तु नाटकीय आरोह-अवरोह का प्राय: अभाव ही है। इसलिए पात्रों कोअपनी भाषा नही मिल पायी। जिससे स्वाभाविकता का विकास न हो सका 22. समकालीन नाटकोंमें वस्तुविश्लेषण का सूक्ष्म आधार आमजीवन से जुड़ा हुआ है, कथावस्तु प्रतीकों और संकेतों के दायरे में पनप रही है, पारस्परिक वस्तु के रूपकत्व एवं पात्रों के मानवीकरण की स्थूल परिपाटी का लोप हो गया है। विविध प्रतीकात्मक सांकेतिक, अन्योक्तिमूलक एवं प्रतिनिधि सूत्रों तथा सन्दर्भों के माध्यम से कथावस्तु को अत्यन्त सशक्त एवं जीवन्त रूप से सम्प्रेषित किया जा रहा है। समकालीन युग कीअभिव्यक्ति को अधिक धारदार और सशक्तबनाने के लिए एतिहासिक तथा पौराणिक बनाने के लिए सन्दर्भोंका उपयोग किया जारहा है, इस दिशामेंकोणार्क, लहरों का राजहंस, और पहला राजा विशेष उपलब्धियाँ हैं कथा एककंस की यक्ष प्रश्न, और प्रजा हा रहने दो, आदि नाटकों में प्राचीन कथा का मात्र ढांचा ही ग्रहण किया गया है। तथा पात्रों के चारित्रिक संस्कारों को सार्वयुगीन संस्कारों का स्वरूप देकर आधुनिकसन्दर्भों में प्रतिष्ठित किया गया है। "शम्बूक साक्ष्य में मात्रपौराणिक सन्दर्भ साक्ष्य में रखकर सम-सामयिक जीवन की विसंगतियों एवं कुंठाओं को उभारा गया है। आधुनिक सामाजिक, मनोवैज्ञानिक विसंगतियाँ और सन्त्रास को जीवन्त रूप में प्रस्तुत करने वाले प्रतीकात्मक नाटकों में बिना दीवारों के घर, आधे अधूरे, द्रौपदी, नरमेध, कर्फ्यू, तिलचट्टा, कुत्ते, तेंदुआ, आदि नाटकोंका विशेष स्थान है, तीक्ष्ण अभिव्यंजना शिल्प में लगभग

सभी सामयिक सन्दर्भों को रोचक और आकर्षक रंग शिल्प देने वाले नाटकों शुतुरमुर्ग, त्रिशंकु, रंस गन्धर्व, अब्दुल्ला दीवाना, औरतेंदुआ, उल्लेखनीय हैं । इस क्रम के नाटकों की कथावस्तु रंग नियात्मक तत्वों से भरपूर सहजमंचीय प्रतीकात्मकता से पुष्टअ भूतपूर्व दृश्यात्मक रंग कौशल से सम्पन्न है ।

लक्ष्मीनारायण लाल का "मादा कैक्टस" नाटक कीकथावस्तु सामाजिक है । अरविन्द एक आधुनिक चित्रकार है, जो सोसिल स्ट्रक्चर और पुरानी मान्यताओं को नकारताहै, और विवाह को घरौंदा समझता है, वह अपनी पत्नी सुजाता को अपनी प्रतिभा और कला के विकास मे बाधक मानकर छोड़ देता है । किन्तु स्त्री से अलग नहीं रह पाता। वह शिष्या और सहकर्मिणी आनन्दा का साथ करता है, एवं उससे अपनी कला के लिए प्रेरणा प्राप्त करताहै । नई मान्यताओं का दावेदार अरविन्द एक साथ सुजाता और आनन्दा दोनों की जिन्दगी सार्थकबना देता है, इस प्रकार नाटक की कथावस्तु प्रतीकात्मक सार्थक औरमौलिक है । नाटक के प्रमुख स्त्री-पुरूष नर यामादा कैक्टस के प्रतीकहैं, वनस्पतिशास्त्र के अनुसार मादाकैक्टस के सम्पर्क में आने पर नर कैक्टस सूख जाता है । इसी सूखने केडर से अरविन्द अपनी पत्नी सुजाता को छोड़ देता है, वस्तु प्रतीकात्मकता मंचीय होते हुए प्रभावोत्पादक और बोधगम्यहै, "नाटक में सगीत से लेकर कार्यों तक घटनाओं से पात्रों तक नीलाम, के बाजों से अनाथालय के बच्चों के गीत तक मादा, कैक्टस से मुर्गाबी चिड़िया, तक प्रतीक ही प्रतीक है । 23. इसी प्रकार सन् 1968 में प्रकाशित ज्ञान देव अग्निहोत्री का शुतुरमुर्ग एक प्रयोगशील प्रतीक नाटकहै इसमें कोई निश्चित कथा न होकर शुतुरनगरी के राजा औरउसकेमन्त्रियों के माध्यम से देश में गरीबी, भुखमरी, अकाल, अभाव, आदि की ज्वलन्त समस्याओं को अभिव्यक्ति मिली है । भ्रष्टाचार शोषण, राजकोष की व्यर्थ बरबादी,

झूठे आश्वासन आदि समसामयिक परिस्थितियों को अभिव्यक्ति देने में सफल हुए हैं। वस्तु की मूलधारणा सम-सामयिक सत्ताधारियों और राजनीतिज्ञों के यथार्थ कारनामों की अभिव्यक्ति है। राजा का शुतुमुर्गी आचरण आजके सत्ताधारी राजनीतिज्ञों का सटीक प्रतीक है इसी प्रकार मोहन राकेश का नाटक आधे अधूरे की कथावस्तु का प्रतीकात्मक है। इसी कारण पुरुष पात्रों को पुरुष, एक, दो, तीन, चार के रूप में सम्बोधित किया गया है। जो आधुनिक मनुष्य के खण्डित व्यक्तित्व के प्रतीक हैं, स्त्री-आधुनिक स्त्रियों के उस वर्ग का प्रतीक है जो हर तरह से पूरा जीवन जीने की महत्वाकांक्षा रखती है। बड़ी बेटा बिन्नी ऐसी नारी वर्ग का प्रतीक है, जो हर तरह से पूरा जीवन जीने की महत्वाकांक्षा रखती है, लड़का जीवन के प्रति आलसी आस्थाहीन, आधुनिक युवकों का प्रतीक है। इस प्रकार वस्तु प्रतीकात्मकता सूक्ष्म और सहज है। वस्तु सम्प्रेषण का अधिकांश भाग पात्रों के तनाव घुटन, झुंझलाहट और कड़वाहट की चुनौती से भरा है। इसी तरह सुरेन्द्र वर्मा का द्रौपदी नाटक प्रतीकात्मक कथावस्तु का दिशा में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इस नाटक की वस्तु प्रतीकात्मकता इसके शीर्षक में ही समायोजित है। पांच पतियों वाली पत्नी द्रौपदी नाटक की नायिका सुरेखा के माध्यम से इस आख्यान को चरितार्थ करती है। द्रौपदी नाटक में वस्तु प्रस्तीकरण कलात्मक रंग युक्तियों से भरपूर नवीन शिल्प में है। इसी प्रकार ब्रज मोहन शाह का नाटक त्रिशंकु को कथावस्तु प्रतीकात्मक है, आज का डिग्रीधारी और बेकार युवक और रंगमंच नाटक दोनों ही त्रिशंकु की नियति के प्रतीक है पूरे एक अंक की प्रस्तुति के लिए एक ही प्रतीकात्मक मंच सज्जा है।

इसी प्रकार डा० लक्ष्मी नारायण लाल का अब्दुल्ला दीवाना मानव जीवन में नैतिक मूल्यों का सार्थक और सटीक प्रतीक है, "हमारे जीवन में कहीं कुछ मर गया है, किसी महत मूल्य की हत्या हो गयी है इसी मूल्य को

अब्दुल्ला कहा गया है, "अब्दुल्ला और कोई नहीं, व्यक्ति के भीतरका एक अत्यन्त मानवीय सत्य है, जो अलगअलग व्यक्तियों में परिस्थिति केअनुसार जी उठता है 24. इसी प्रकार डा० सुरेन्द्र चन्द्र शुक्लके नाटक- आकाश झुक गया है, में वस्तु प्रतीकात्मकता अत्यन्त सार्थक है, स्वामी पुणानन्द आज कोभौतिकता के जीवन्त प्रतीक है, सर्वत्र स्वार्थ, पुंपच, बेईमानी व्याप्त है, वासना का नंगा नाचहो रहाहै, मानव मूल्य समाप्त हो रहे हैं। यहां विघटित मूल्य मानव मूल्य आकाश के झुक जाने को संकेतित कर रहे हैं, इसीप्रकार सुशील कुमार सिंह का "सिंहासन खालीहै" नाटक की वस्तु प्रतीकात्मक है, नाटक कीवस्तुसत्ता और सिंहासन की कथा है, दया प्रकाशसिन्हा के नाटक "कथा एक कंस की" का वस्तु प्रतीका- त्मकता सहज है, कंस प्रजा उत्पीड़क, अत्याचारी, अराजक, कुव्यवस्था, का प्रतीक है, कृष्ण इस व्यवस्थाके विरूद्ध उठ खड़े हुए पीड़ित जनसमुदाय के संगठित नेतृत्व के प्रतीकहैं, कंस और कृष्णआधुनिक राजनैतिक परिवेश मे सीधे और सटीक बैठते हैं, इसी प्रकारनरेन्द्र कोहली का नाटक "शम्बूक की हत्या, में शम्बूक जीवन केप्रत्येक कार्य क्षेत्र में व्यापार, व्यवसाय, नौकरी, सामाजिक, धार्मिक औरराजनीतिक हरकहीं ईमानदारी से काम करनेवाला आज के इन्सान काप्रतीक है, ब्राह्मण चोरी, भ्रष्टाचार मिलावट, सिफारिश, झूठ फरेब करने वाला आज केसुविधा भोगी इन्सान काप्रतीक है। अकाल मृत्युसे मरे पुत्र के शव के आनार राम केपो राष्ट्रपति से मिलकर न्याय पाने शम्बूक के बध करने की प्रेरणा का प्रसंग, शम्बूक कोराम द्वारा हत्या काप्रसंग एकपौराणिक वृत्त है जो आजझूठ फरेब और बेईमानी से सुविधाहासिलकरनेवालोंद्वारा सही औरईमानदार व्यक्तियों कोशासन तन्त्र द्वारा ही समाप्तकरा देने के षड्यन्त्र का संकेतकरता है। इसकीवस्तु प्रतीका- त्मकता सटीक है। सम्पूर्ण वस्तु को एक हीअंक में प्रस्तुत करना तथा पुत्र के शव को कमाल मेंदबाये हुए प्रस्तुत होना बड़ा ही आकर्षक बन पड़ता है।

मुद्राराक्षस का तैदुआ नाटक की वस्तु का प्रस्तुतीकरण स्टाइलाइज्ड है। मिसेज राय की तैदुआ जैसे जंगली बूट को शौक मिसेज राय गरीब माली से पूरा करती है। डा. लक्ष्मी नारायण लाल का नाटक यक्ष प्रश्न में यक्ष महत्वपूर्ण भूमिका में समय का प्रतीक है, युधिष्ठिर के अतिरिक्त चारों पाण्डवों आज के मनुष्य मात्र के प्रतीक हैं। इसी प्रकार शंकरशेष का नाटक एक और द्रोणाचार्य का प्रतीक है, द्रोणाचार्य और अरविन्द की घटनायें साथ साथ चलती है। दोनों घटनाओं को एक साथ रखने की सार्थकता भी विचारणीय है। कथा के माध्यम से अरविन्द विमलेन्दु, और द्रोणाचार्य के प्रसंग पृथक रूप से एक के बाद एक सम्प्रेषित होते हैं। पार्श्व में विमलेन्दु के प्रेत की अभिव्यक्ति ध्वनि-प्रभाव प्रयोग की एक आकर्षक रंग सृष्टि है। वस्तु की दृष्टि से सन् 1975 में प्रकाशित सुरेश चन्द्र शुक्ल का कुत्ते नाटक एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है, इस नाटक में मिस आभा और मिस राका पढ़ी लिखी स्नातक वर्ग की नौकरी पेशा उन वर्ग की लड़कियों के प्रतिनिधि है जो दफ्तरों के अधिकारीगण काम लोलुप कुत्ते के प्रतीक हैं, नाटक में स्पष्ट रूप से कहा गया है ये भूखे कुत्ते है, इन्हें रोटी से ज्यादा मांस प्रिय है। मांस का टुकड़ा दूर से दिखाये गये तो पूंछ हिलाते हैं, इसी प्रकार गिरिराज किशोर का प्रजा ही रहने दो नाटक की कथावस्तु सम्पूर्ण प्रतीकात्मक है। महाभारत के अधिकांश पात्र इस नाटक में आ गये हैं, प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु का मूल आधार सत्ताधारियों की ओछी राजनीति प्रजा की चीख, सर्वसत्ता, कौतुक, राजाओं का सन्तान मोह, अंधे राजा, की नैतिकता, गांधारी जैसी सबला शासिकाओं के स्वार्थ प्रेरित कृत्य अन्ततः महाभारत और विनाश आदि विश्लेषण के मूल आधार है प्रस्तुत नाटक में गान्धारी सत्ता संचालिका नारी के संहार पक्ष की प्रतीक है। धृतराष्ट्र अंधी व्यवस्था का प्रतीक है, युधिष्ठिर धर्म और सत्य के प्रतीक हैं।

डा• सुरेश चन्द शुक्लकानाटकभस्मासुर अभी जिन्दा है, एक नया प्रयोग शीलनाटक है। जिसकीकथावस्तु समसामयिक राजनीतिक,सामाजिक, विसंगतियों कोव्याप्ति करतीहै। इस नाटककेवस्तु शिल्प औरउसकी प्रतीकात्मकता कावास्तविक महत्व उसके मंचीयक्ष सम्प्रेषण के रंगकौशल से उजागर होता है। पूरी वस्तु एक ही रंग प्रस्तुतिके क्रममें है। वस्तु को अनेक छोटे छोटेटुकड़ोंमें रखकर महाप्रभु औरमिट्ठू के उस्ताद औरजम्हूरे कीलोक शैलीमें मदारी जैसे अभिनय द्वारा नये शिल्प में आबद्ध किया गयाहै। इसप्रकार यदि हम कथावस्तु की दृष्टि से प्रतीकनाटकों का अनुशीलन करते हैंतोउसकी वस्तु भी भीपर्याप्त रूप में प्रतीकात्मक और सांकेतिक दिखायी देतीहै।

(ख) मंगलाचरण="
==============

समकालीन युग के नाटककारों ने मंगलाचरण नान्दी, चूलिका, अंकावतार, जैसेप्राचीन कला का नाट्य रूढ़ियों का बहिष्कार किया। आधुनिक परिवेश में आकरनाट्य विधा अन्य अनेक रूढ़ियों से मुक्तहो रही है। मंगलाचरण और नान्दी आज पूर्ण रूप से अपने स्वरूप कोत्याग चुके हैं। कुछ नाटककारों ने लोकनाट्यों के आधार पर मंगलाचरण व प्राचीन नाट्य रूढ़ियों को अपनाया है।डा• लाल का तोता मैना, सगुन पंछी, मणिमधुकर का खेल, पोलमपुर रसगन्धर्व आदि इसके जीतेजागते उदाहरण है। आधुनिक समाज में जहाँ पर व्यस्तता आधुनिकता, अजनबीपन व्याप्त हो रहाहै, वहीं पर नाट्य विधा मेंभी बड़ी तेजी से शिल्पगत परिवर्तन आ रहे हैं।

इसप्रकार प्रतीक नाटकोंमें मंगलाचरण की जगह सूचक चिन्हों काप्रयोग किया गयाहै। लहरों के राजहंस की शंखध्वनि, शुतुरमुर्ग, नाटक राजा-रानी, कीमंगलगान, पहला राजामेंडमरू का निनाद, नगाड़ेडमरू और

बंशी के समन्वित स्वर, मंगलाचरण का बोधक, है, यक्ष प्रश्न में द्रौपदी की करुण पुकार, मंगलाचरण का जाता जागता प्रतीक है, इस प्रकार का मंगलाचरण नाटक केप्रारम्भ मध्य अन्त कहीं भी हो सकता है ।

(ग) भरत वाक्य:-

नाटक को सम्प्रेषणीय और रुचिकर बनाने के लिए भरतवाक्य का प्रयोग किया जाताथा । प्रस्तावना प्ररोचना तथा भरतवाक्य का प्रयोग नाटक में रसकी स्थिति कोमजबूत करना था इसीकारणभारतीय नाट्य शास्त्र के प्रणेताओं ने वस्तु एवं पात्रों की अपेक्षा रस को श्रेष्ठता प्रदान की । परन्तु समकालीन नाटकों में पाश्चात्य शिक्षा, विज्ञान, औद्योगिक विकास आदि के बढ़ने से बौद्धिकता का समावेश बढ़ा आज का नाटकभी नये चिन्तन व नवीन दृष्टि कोणों कासमावेश होगया ।देवयानी का कहना है कि कुत्ते, तीसरा हाथी, बाहरे इन्सान, आधे अधूरे, नाटकमें भारत वाक्य जैसी प्राचीन पद्धतियों की जगह नवीन नाटकीयता पूर्णशैली कोअपनाया गया है । आज की नाट्य शैलीने कथावस्तु व पात्रों की मन:स्थिति के अनुरूप स्वयं को ढालकर नया कलेवर धारण किया है।

(घ) अवस्थायें:-

आज के इसआपाधापी औरभागदौड़ भरे जीवन में लिखेजा रहे नाटक ज्यादातर अंक-दृश्य योजना विहीन पंच सन्धियाँ अर्थ प्रकृतियाँ और कायवस्थाओं से बहुत दूर है शिल्प के धरातल पर न तो पारम्परिक तीन अंकों वाले नाटकहैं ।और न हो एकांकीकी तरह क्षणिक संक्षिप्त और एकायामी अपने हो भीतर निरन्तर छोटे होतेजा रहे लघुमानवों को जिन्दगी के लघुनाटक, आज का आदमी दोहरे चरित्र काहो गया है। चरित्र कादोहरे पन इकहरे नाटक में कभी भी फिटनहीं हो सकता । एक ओर हमारे सामने प्रजा हो रहने दो,सबरंग मोहभंग जैसे नाटक हैं, जिसमें केवल दृश्य

संध्याएँ भर दोगयी हूँ । तीसरा हाथी, एक और द्रोणाचार्य, बुलबुल, सराय एक और अजनबी जैसे नाटक है जिसमें केवल बीच में मध्यान्तर की योजना कर नाटक को दो भागों में बाँट दिया गया है । तीसरी और दुलारीबाई, योसपिथ फुला, आज नहीं कल, लोटन, आदि नाटकहै, जिनमें किसी प्रकारका विभाजन नहीं मिलता एक घटना की तरह नाटक शुरू होता है और खत्म हो जाता है ।

ङ. - पात्र परिकल्पना:-

समकालीन प्रतीक नाटकों में नाटककारों ने अपने चरित्रों को प्रतीकबनाने के लिए विशिष्ट नाम न देकर उन्हें जातिगत सम्बोधनों से अभिहित किया है जैसे आधे अधूरे, शुतुर्मुर्ग आदि नाटकों में नाटककारों ने नाटकों पात्रों का विशिष्ट नाम न देकर काले सूटवाला आदमी, पुरूष,एक, पुरूष दो, पुरूष तीन, पुरूष चार, स्त्री, बड़ी लड़की, छोटी लड़की तथा लड़का कहा है । शुतुर्मुर्ग नाटक में ज्ञानदेव अग्निहोत्री ने अपनेपात्रों को राजा रानी रक्षामन्त्री , शिक्षामन्त्री, विरोधी लाल महामन्त्री, मामूली राम, तड़पमरता हुआ आदमी आदिप्रतिनिधि नाम देकर आधुनिक राजनीतिक व्यंग्य को उजागर कियाहै अतः नवीन छवे प्रवृत्ति के इन नाटकों में पात्रों का व्यक्तित्व अस्तित्व में नहा है, नाटककारों ने एक सामाजिक राजनैतिक, या किसी अन्य परिवेश गत भूमिका में अपने पात्रों के चरित्र की परिकल्पना की है ।

तीन अपाहिज, लोटन, चारपाई, पूर्णविराम, आदि नाटकों के पात्रों में इस तथ्य को देखा जासकता है, नाटककार अपने पात्रों को जनसाधारण से जोड़ने के लिए उसके नामकरणको समाप्त कर अ, ब, स स्त्री एक, पुरूष दो, बूढ़, तीन पुरूष, छोटी लड़की आदि से परिचय देता है।

जिससे दर्शक अनुभव कर सके कि यह राम, श्याम, अन्य नाटकीय पात्र न होकर उन्हीं के बीच से उभरा व्यक्ति है ।

आधुनिक व्यक्ति का जीवन अनेक प्रकार की विसंगतियों से भरा हुआ है, उसका इसी नीरसता को नाटककार प्रतीकों के माध्यम से कथाहीन टुकड़ों में विभाजित असंगत सी प्रतीत होती कथावस्तु के माध्यम से व्यक्त कर रहा है । रोशनी एक नदी, रसगन्धर्व, लौटन, आज नहीं तो कल, पुजा ही रहने दो, दरिन्दे, उत्तर उर्वशी, द्रौपदी नाटकों में अपने दायरों में सिमेट जाने की प्रक्रिया सेगुजर रहे जीवन और अनुभवों का अब कथावस्तु संघर्षों व फलप्राप्ति के आरोह-अवरोह के बीच से नहीं गुजरतीअपितु टुकड़ों व बिम्बों में बंट गयी है ।

आलोच्य कालीन नाटकों की कथावस्तु अधिकाधिक प्रतीकात्मक होती है, राजहंस तेंदुआ, तिलचट्टा, बढ़ती हुई नारी स्वच्छन्दता व पुरानी पीढ़ी के वैचारिक द्वन्द्व को देवयानी का कहना है और तीसरा हाथी, द्रौपदी " न धर्म न ईमान" ओह अमेरिका, सादर आपका" आदि में व्यक्त किया है, आलोच्य कालीन नाटकों में काम कुन्ठा विशेष रूप से उद्घटित होता है ।

तेंदुआ द्रौपदी सूर्यका अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक नरमेध, आधे-अधूरे, तिलचट्टा, अपनी पहचान, सादर आपका आदि नाटकों में फ्रायड वादी मनोविज्ञान पर आधारित काम कुंठाओं को निःसंकोच साहसिक रूप से उद्घाटित किया है आज का नाट्यशिल्पी आत्मव्यक्ति के प्रत्येक पक्ष को अभिव्यक्तकरने में ही अपनी लेखनी की सार्थकता समझ रहा है, आज का नाटककार पौराणिक घटनाओं को तर्क के आधार पर आत्मसात कर युगानुरूप बना रहा है। सम सामयिक युगीन शक्ति व्यक्ति के बिखराव और विक्षिप्तता को दुर्बल मानव व प्रतीक और प्रतीकात्मक रूप में बखूबी उभारा जा रहा है ।

"तोता र हाथी, कैक्टस आदि प्रतीक मानव की मनोदशाओं को सफलता से अभिव्यक्त कर रहे हैं । आधुनिक नाटकों में पौराणिक मिथकों एवं प्रतीकों के द्वारा समकालीन जीवन तथ्यको उद्घाटित किया जा रहा है । इसमें डा॰ लाल का नाम उल्लेखनीय है । उन्होंने तोता मैना, सूर्यमुख, यक्षप्रश्न, एक सत्य हरिश्चन्द्र, मिस्टर अभिमन्यु, आदि नाटकों में पौराणिक पात्रों व कथानकों से आम व्यक्ति के जीवन की विसंगतियों कुंठाओं व विद्रूपताओं को यथार्थ फलक पर उभारा है। डा॰ लाल के अतिरिक्त ब्रजमोहन शाह कृत त्रिशंकु सुरेन्द्र वर्मा, कृत सूर्य की अन्तिम किरण में सूर्य की पहली किरण तक जि॰ जे॰ हरिजीत कृत सम्भवामि युगे-युगे, भस्मासुर, एक और अभिन्यु, पहला राजा आदि अन्य नाटकों में प्रतीकों के माध्यम से आधुनिक चेतना को स्पष्ट किया गया है साथ ही समकालीन युग में व्याप्त भ्रष्टाचार प्रशासनिक धांधलेबाजी, युवापीढ़ी, की दिशाहीनता, तथा बुद्धिजीवी, की तटस्थता को कथावस्तु का रूप दिया गया है । जिस युगमें नाटक का कथ्य और शिल्प बदलता है, तो उसके साथ साथ संवाद की भाषा और शैली भी बदल जाती है, सामाजिक राजनैतिक परिवर्तन और उस परिवर्तन के दबाव से बदलता साहित्य भाषा में प्रयुक्त शब्द अर्थ को नये आयाम प्रदान करता है इसीलिए प्रत्येक सफल साहित्यकार देशकालकी स्थिति के परिवर्तन और चिन्तन की सामग्री से अपनी भाषा को सर्जना करता है, भारतेन्दु, प्रसाद, मिश्र, माथुर भारती, लाल, राकेश वर्मा, व मधुकर आदि नाट्यभाषा के ऐसे मील के पत्थर हैं, जहाँ पर भाषा अपना परिवर्तित रूप शब्दों के नये अर्थ औररूढ़ियाँ होते हुए भी भाषिक परिवर्तन का आकांक्षाये लिए हुएहै ।

जैसाकि स्पष्ट किया जा चुका है, कि संस्कृत नाटक अति आदर्श युक्त तथाजनता की पहुँच के बाहर थे, इसी लिए उनकी कथावस्तु केअनुरूप

भाषा भी धर्म, दर्शन, व रूढ़िगत मान्यताओं से बोझिल थी, काव्यात्मकता के गहरे जंगल में नाटकीयता खो बैठी थी, "उसमें विशिष्ट दार्शनिक उक्तियाँ है अंतः भावो घटनाओं के सूचक अर्थ हैं। सूक्ति आप्त वाक्य संकलन और व्यर्थकता है, किन्तु नाटकीय आरोह-अवरोह का प्रायः अभाव ही है। इसलिए पात्रों को अपनी भाषा नहीं मिल पायी 26 जिससे स्वाभाविकता का विकास नहीं होसका।

(घ) भाषा शैली संवाद योजना: देशकाल तथा वातावरण के रूप में वर्तमान राजनीति और नाट्यकृतियों में समाहित समाज शास्त्रीय पक्ष:-

वास्तव में भाषा और संवाद में नयापन देने का काम भारतेन्दु युग ने ही किया प्रसाद ने संस्कृत निष्ट शब्दावली का प्रयोग करके भाषा को नया (आयाम अवश्य दिया परन्तु वह साधारण बोलचाल की भाषा से कहीं दूर जा रही थी, कुछ समय बाद पुनः यथार्थवाद के नाम पर बोलचाल की भाषा पर बल दिया गया जिसमें अश्क, मिश्र जैसे नाटक कारों ने आम व्यक्ति की समस्याओं को नाटक की कथावस्तु बनाकर सीधी सहज भाषा में प्रयुक्त किया। इस प्रकार स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भाषा भी उतार चढ़ाव के साथ प्रस्तुत होती रही, प्रयोग वाद के साथ ही संक्रान्ति की एक ऐसी स्थिति आया, जब पुरानी भाषा अर्थहीन लगने लगी, स्वतन्त्रता के बाद यह अहसास निरन्तर गहरा होता गया बदली हुई परिस्थितियों में टूटते रिश्तों, विषाद पूर्ण स्थितियों मानव की अवमाननाओं और विघटित होते जीवन मूल्यों के सामने प्रचलन की भाषा एक दम फीकी और पुरानी पड़ गयी, जीवन सन्दर्भों के बदलते हुए उनके श्रोतों से नई भाषा और नये संवेदनों का जन्म हुआ, जिसने हिन्दी नाटक को नई भाषा शैली प्रदान की।

नाटकके केन्द्र में आज आत्म केन्द्रित खण्डित, दिशाहीन, स्वतन्त्र सम्बन्ध हीन, केवल अपनेतक सीमित ऐसा व्यक्ति है जिसकी कथनी और करनी में अन्तर है, इसलिए नाटककार ने उस व्यक्ति के अनुरूप भाषा को देने का प्रयास किया है ।

सम-सामयिक नाटकों में कुछ ऐसे नाटक हैं, जिनमें काव्य बिम्ब और प्रतीकों से भरपूर भाषा प्रयुक्त हुई है । इनमें रातरानी, लहरों के राजहंस, सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक आठवाँ सर्ग, आदि नाटक महत्वपूर्ण है ।

दूसरी ओर संवेदन शून्य सीधी सपाट भाषा है, जिसमें बकरी, नरसिंह कथा, पहला राजा, कथा एक कंस की, त्रिशंकु, आधे-अधूरे, आदि नाटक प्रमुख है । इसके अतिरिक्त कुछ इस प्रकार के नाटक हैं, जिनमें पारिवारिक रिश्तों की टूटन, घुटन, अलगाव, से भरी उत्पन्न आक्रोश, से भरी तीखी, चुभती, तथा मर्मभेदी भाषा का प्रयोग हुआ है, द्रौपदी एक और अजनबी, नरमेध, चारपाई, देवयानी, का कहना है वामाचार, तीसरा हाथी, तिलचट्टा, आदि में आधुनिक विसंगतियों को प्रतीकों की भाषा के साथ निर्ममता पूर्वक उभारा गया है ।

मणिमधुकर, रमेशबक्षी, मुद्राराक्षस, भाषा को भिन्न तेवर के रूपमें अपनाया है, जो उसके नंगे पन को उजागर करता है । इनकी भाषा परम्पराओं के प्रति विद्रोही व्यक्ति की तीखी चुभन की गहराई से व्यक्त करनेमें पूर्णतः सक्षम है, आज का नाटककार अर्धवाक्यों, मौन, रंगध्वनि, रंग संकेतों, तथा प्रतीकात्मकता, अभिनय द्वारा ही वह भाव व्यक्त करता है, जो लम्बे लम्बे संवाद भी सफलता पूर्वक अर्थाभिव्यक्ति में समर्थ नहीं हो पाते । समकालीन नाटककार नाट्य भाषा को बहुत अधिक साहित्यिक न रखकर प्रतीकों के माध्यम से जीवन और मंच के समीप लाने का पक्ष पातीहैं । नाटक में संवाद अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है, संवादों के आधार पर ही -

कथावस्तु निर्मित होता है । संवादों के द्वारा ही पात्र का मनोभाव और चरित्र खुलता है ।

भारतेन्दु युग में नाट्याचार्यों द्वारा स्वीकृत सर्वश्राव्य, नियतश्राव्य, और अश्राव्य, इन तीनों प्रकार के संवादों का प्रयोग हुआ है । रोमांटिक और पौराणिक नाटकों में गद्य और पद्य दोनों का प्रयोग हुआ है, जब कि सामाजिक नाटकों और प्रहसनों में व्यंग्यपूर्ण संवादों का प्रयोग भी हुआ है । तत्कालीन युग की परिस्थितियाँ ही ऐसी थी, कि साहित्यकार सीधे सीधे ब्रिटिश शासकों पर आरोप नहीं कर सकता था इसके लिए उसके संवादों की भाषा प्रतीकात्मक या अन्योक्ति परक होती थी ।

जैसा कि स्पष्ट है कि इब्सेन के क्रान्तिकारी विचारों ने नाटकों में कृत्रिमता, अस्वाभिवकता, व आडम्बर के विरुद्ध यथार्थवादी, सहजतापूर्ण और वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान किये । जिसका अनुकरण पश्चिम के अधिकांश नाटककारों ने किया । इब्सन की इसी विचारधारा से प्रभावित होकर उपेन्द्रनाथ अश्क, लक्ष्मीनारायण मिश्र, भगवती चरणवर्मा, आदि नाटककारों नेयथार्थवादी चिन्तन पर आधारित समस्या नाटकों का सृजन किया, गत दो दशकों में अस्तित्व वादी दर्शन से प्रभावित तथा स्वअस्तित्व की खोज पर आधारित कथावस्तु कोलेकर जिन नाटकों का सृजन हुआ उन नाटकों के संवाद वैचारिक द्वन्द्व लियेअपेक्षाकृत लम्बे और दार्शनिक शैली में निबद्ध हैं । लहरों के राजहंस, सूर्यमुख, रातरानी, तीसरा नेत्र, आदि इसी प्रकारके नाटक हैंऔरजो नाटक राजनैतिक चेतना से ओत प्रोत है, अथवा जिनमें भ्रष्ट राजनीति से तिलमिलाती जनता की वाणी कोअभिव्यक्ति मिली है, उन नाटकों में तीखे त्वरित, छोटे तथा नारे के समान, लगनेवाले संवादों को प्रयुक्त किया गया है "कल आजऔर कल" तथा "रोशनी एक नदी है" नाटक तो यांत्रिक संवादों पर आधारित है ।

जहाँ रस गन्धर्व, के संवाद शब्द जाल से घिरे दिखायी पड़ते हैं, वहीं पर चिलचट्टा, मरजावा, एक और अजनवी, बुढ़िया, के संवाद तथा पारपाई, में बूढ़े वबुढ़िया के संवाद तथा स्त्री-पुरुष, के संवाद सम्बन्धों को चित्रित किया गयाहैनिश्चय ही आज कल संवाद व भाषा की दृष्टि से हिन्दी नाटक जागरूकता का परिचय दे रहाहै, नाट्य शैली ने कथावस्तु व पात्रों की मन: स्थितियों केअनुरूप स्वयं को ढालकर नया कलेवर धारण किया है, भाषा और संवाद का यह नया तेवर व्यक्ति कीअनुभूति कोबदलतेस्तर को बखूबी उजागर कर रहा है। आम आदमी की जटिलताओं व मन: स्थितियों को बखूबी प्रदान कर रहा है।

इस प्रकार विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों के प्रयोग से रंग मंचीय साज सज्जा, दृश्य विधान को नये आयाम प्रदान कियेहैं, ध्वनि संकेतों तथा रंगदीपन को नया रूप दियाहै। परिक्रमा करने वालेतथा रहट की तरह घूमने वाले रंग मंच अथवा प्रेक्षा गृह नेआज प्रेक्षक और अभिनेता समीप लाकरखड़ा कर दिया है बंधीबंधाई लीक पर चलरही कथावस्तु अपनी परम्परा को त्यागकर साधारण व्यक्ति से जुड़ गया है, आज कथावस्तु में देवता, अलौकिक, पात्र या उच्चवर्गीयपुरुष पात्र ही स्थान नहीं पा रहे, अपितु निम्न वर्गीय पराजित, थका टूटा, बर्थ व्यक्त और नारी भी अपनी अभिव्यक्ति पा रहे हैं, आधे अधूरे का महेन्द्र, घरौंदा, का सुदीप, सूर्य की अन्तिम किरण, से सूर्य की पहली किरण, तक का ओक्काक त्रिशंकु नाटक का युवक, लौटन केपात्र किशोर, लौटन, बाबू आदि तथा कजरीवन, की अछूत युवती, कजरी और सुनो शेफाली का हरिजन लड़की शेफाली आदि पात्र अपनी मन:स्थितियों जटिलताओं के साथ चित्रित हो रहे हैं।

आधुनिक परिवेश में नाट्य विधा अन्य अनेक रूढ़ियों में मुक्तहो रहीहै, मंगलाचरण व नान्दी अपने स्वरूप को त्याग चुके हैं, किन्तु कु० नाटककारों ने लोक नाट्यों के आधार पर परम्परागत नाट्य शैली को अपनाया है इसमें

डा० लाल का तोता मैना, सगुन पंछी, मणि मधुकर का खेला, पोलमपुर रसगन्धर्व, ब्रजमोहन शाह का त्रिशंकु, आदि नाटक मुख्य हैं, आधुनिक समाज में जहाँ व्यस्तता, यान्त्रिकता तथा अजनबीपन व्याप्त होता जा रहा है, वहीं पर नाट्य विधा में कथ्यमें शिल्पगत परिवर्तन आ रहे है । यही कारण है कि सम-सामयिक नाटकों के संवाद लघु, तीक्ष्ण, व व्यंग्यात्मक हो गये है इस दृष्टि से बाभाचार, द्रौपदी, सूर्य की किरण, अन्ति से सूर्य की पहली किरण तक, चिलचट्टा, अपनी पहचान, आदि नाटकअपनी महत्वपूर्ण पहचान बनाये हुए हैं। नाट्य भाषा व संवाद को समाज व व्यक्ति ने तो प्रभावित किया हीहै साथ ही साथ राजनीतिक भ्रष्टाचार व आपाधापी, ने भी अपना रंग छोड़ाहै, इसलिए संवाद नारेबाजी से बिखरे-बिखरे, व घुटे-घुटे से लग रहे हैं । आधुनिक व्यक्ति परिस्थितियों से बोखलाया हुआ है । अतः उसके संवाद टूट-फूटे तर्कहीन सन्दर्भहीन व अजीबोगरीबदृष्टिगोचर हो रहे हैं ।

Chapter-3

सन्दर्भ सूची

तृतीय परिच्छेद

1. नाट्यशास्त्र: भरतमुनि संपादक एम• रामकृष्ण कवि 1256भाग-1,2 33-34, ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट बड़ौदा, पृष्ट 56
2. अभिनव विकृति सं• नगेन्द्र एवं आचार्य विश्वेसर सिद्धान्त शिरोमणि हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली 1960 पृष्ट297
3. राम चन्द्रगुप्त: हिन्दी नाट्य दर्पण 4/230सूत्र की टीका सं• नगेन्द्र तथा दशरथ ओझा दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली 1960 पृष्ट 297
4. बलवन्त गार्गी: रंगमंच पृष्ट175
5. पहला राजा: जगदीश चन्द माथुर पृष्ट 13
6. आधे-अधूरे, मोहन राकेश पृष्ट10
7. नटरंग : अंक -18 पृष्ठ -1 तिलचट्टा -मुद्राराक्षस पृष्ट 4 तथा 10
8. त्रिशंकु: बृजमोहन शाह पृष्ट 8
9. यशवन्त केलकर: मंच सज्जा विकास रेखा पृष्ट 209
10. डा• दशरथ ओझा: हिन्दी नाटक उदभव और विकास पृष्ट 280
11. दीवार: पृथ्वीराज कपूर और सहयोग पृष्ट 44
12. रसगन्धर्व मणि मधुकर पृष्ट 13
13. सिंहासन खाली है, सुशील कुमार सिंह पृष्ट 7
14. कथा एक कंस की: दया प्रकाश सिन्हा पृष्ट 29
15. डा• अज्ञात: रंगममंच सिद्धान्त और व्यवहार पृष्ट 146
16. विश्वनाथ शर्मा: मंची प्रकाश योजना, स्वरूप और विकास पृष्ट 225, चन्द्रलाल दुबे, अभिनन्दन ग्रन्थ सं• डा• शिव राम माली
17. डिक्शनरी आफ वर्ल्ड, लिटरेचर पृष्ट 310
18. नगेन्द्र अरस्तू का काव्य शास्त्र पृष्ट 66
19. धनंजय: दशरूपक नाट्य शास्त्र पृष्ट1/15

20. गिरीश रस्तोगी: हिन्दी नाटक उद्भव और विकास पृ. 45

21. हिन्दी साहित्य कोष: भाग-1 पृष्ठ 186

22. रंगमंच की भूमिका और हिन्दी नाटक डा. रघुवर दयाल वार्ष्णेय
पृष्ठ- 209

23. डा. लक्ष्मी नारायण, लाल मादा कैक्टस भूमिका

24. अब्दुल्ला दीवाना पृष्ठ- 9 (श्याम अरोड़ा) नाटक के निर्देशन
के दौरान

25. सुरेश चन्द्र शुक्ल, कुत्ते पृष्ठ 32

26. रंगमंच की भूमिका और हिन्दी नाटक डा. रघुवर दयाल वार्ष्णेय
पृष्ठ- 209